विपरीत, यदि भविष्य में वस्तुओं की माँग कम होने की सम्भावना है तो M.E.C. तथा निवेश में कमी होगी।

(ii) **लागतें तथा कीमतें**—यदि भविष्य में लागतें कम होने तथा कीमतें बढ़ने की सम्भावना है तो भावी प्राप्ति के अनुमान में वृद्धि होगी तथा निवेश बढ़ेगा। भविष्य में लागतें बढ़ने तथा कीमतें कम होने की सम्भावना निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगी।

(iii) **उपभोग-प्रवृत्ति**—उपभोग-प्रवृत्ति में वृद्धि होने पर भी M.E.C. में वृद्धि होगी तथा निवेश बढ़ेगा, क्योंकि उपभोग पदार्थों की माँग में वृद्धि होने पर निवेश अधिक करना होगा।

(iv) **आय में परिवर्तन**—आय के स्तर में परिवर्तन में त्वरक (acceleration) के माध्यम से M.E.C. तथा निवेश को प्रभावित करते हैं।

(v) **अनुमानों की वर्तमान स्थिति**—निवेश पर प्राप्त होने वाली वर्तमान में प्राप्ति भविष्य के व्यावसायिक अनुमानों को प्रभावित करती है। वर्तमान में प्राप्ति दर अधिक होने पर M.E.C. अधिक होगी।

(vi) **व्यावसायिक विश्वास की स्थिति**—उद्यमकर्ता आशावाद और निराशावाद का निरन्तर सामना करते रहते हैं। आशावाद के कारण व्यापारी प्रायः निवेशों पर प्राप्ति के प्रति अत्यधिक आशावान रहते हैं जिससे M.E.C. में वृद्धि होती है। इसके विपरीत, निराशावाद की स्थिति M.E.C. में कमी लाती है।

**दीर्घकालीन कारण**

1. **जनसंख्या की वृद्धि दर**—तेजी से बढ़ती हुई जन-संख्या से सभी वस्तुओं की माँग निरन्तर बढ़ती है जिसके कारण दीर्घकाल में निवेश बढ़ता है।

2. **नये क्षेत्रों का विकास**—नये क्षेत्रों में विकास होने पर विविध उद्योगों तथा कार्यों में निवेश बढ़ता है तथा M.E.C. में वृद्धि होती है।

3. **प्राविधिक प्रगति**—प्राविधिक प्रगति नवप्रवर्तन को प्रोत्साहित करती है जिससे नयी मशीनों और यन्त्रों आदि में निवेश बढ़ता है।

4. **वर्तमान पूँजीगत साज-सामान** (equipment) **की उत्पादक क्षमता**—यदि प्रतिस्थापन क्षमता का पूर्ण उपयोग नहीं हो रहा है तथा औद्योगिक क्षमता का एक भाग अप्रयुक्त है तो माँग में वृद्धि होने पर इसे वर्तमान क्षमता का प्रयोग करके ही पूरा किया जाता है। इसके विपरीत, यदि वर्तमान उत्पादक क्षमता का पूर्ण प्रयोग किया जा रहा है तो माँग बढ़ने पर नये साज-सामान की आवश्यकता होगी जिसके लिए नया निवेश होगा।

5. **निवेश की वर्तमान दर**—यदि किसी उद्योग में निवेश की वर्तमान दर काफी ऊँची है तो भविष्य में इसमें और अधिक वृद्धि की सम्भावना कम होगी। मान लीजिए, कपड़ा मिलों में वर्तमान में यदि बहुत अधिक विस्तार हो रहा है तो भविष्य में भी विस्तार की यह दर बने रहना तभी सम्भव है जब कपड़े की माँग में असाधारण वृद्धि हो और नयी मिलों की स्थापना की जाय।

**पूँजी की सीमान्त कुशलता की आलोचना** (Criticism of the Marginal Efficiency of Capital or M.E.C.)

आलोचकों ने केन्स की इस धारणा (M.E.C.) की कड़ी आलोचना की है। प्रथमतः, आलोचकों का कथन है कि प्रो. केन्स ने शब्द M.E.C. का प्रयोग इतने विभिन्न अर्थों में किया है कि जिसका सही-सही अर्थ समझ सकना यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य ही है। वह इस शब्द का प्रयोग एक निश्चित अर्थ में नहीं कर पाये हैं तथा उन्होंने इसका कभी कुछ और कभी कुछ अर्थ लगाया है। इस सम्बन्ध में प्रो. हैजलिट (Hazlitt) का कथन है कि यदि प्रो. केन्स ने इस शब्द का प्रयोग न किया होता तो वह कई प्रकार की अस्पष्टताओं (ambiguities), अनिश्चितताओं (uncertainties) एवं कुतर्कों (bad reasonings) से अपने को बचा सकते थे। इस शब्द के स्थान में वह अनेक प्रचलित शब्दों में से किसी एक का प्रयोग कर सकते थे। जो शब्द उस समय प्रचलित थे, वे इस प्रकार हैं—सीमान्त उत्पादकता (marginal productivity), प्राप्ति (yield), या उपयोगिता (utility) या पूँजी की कुशलता (efficiency of capital)। आलोचकों का कथन है कि प्रो. केन्स ने इन प्रचलित शब्दों में से जिस शब्द का चयन किया वह पूँजी की कुशलता या उत्पादकता है। यह इन सब शब्दों में से बहुत ही अनिश्चित एवं अस्पष्ट है।

M.E.C. की आलोचना का द्वितीय कारण है कि केन्स यह जान सकने में असफल रहे कि ब्याज की दरें आशंसाओं (expectations) से इतनी ही शासित होती हैं जितनी कि पूँजी की सीमान्त उत्पादकता होती है। प्रो. केन्स का विश्वास था कि पूँजी की सीमान्त उत्पादकता और आशंसाओं का चोली-दामन का साथ होता है किन्तु ब्याज की दर का आशंसाओं से कोई सम्बन्ध नहीं है। दूसरे शब्दों में, केन्स ने पूँजी की सीमान्त उत्पादकता को **गतिशील अर्थशास्त्र** (dynamic economics) के क्षेत्र में और ब्याज-दर को **गतिहीन अर्थशास्त्र** (static economics) के क्षेत्र में सम्मिलित किया था। आलोचकों का कथन है कि इस मान्यता का न तो कोई आधार था और न आर्थिक जीवन के तथ्यों के साथ इसका कोई तालमेल ही था। प्रो. हैजलिट का कहना है कि यदि पूँजी की सीमान्त उत्पादकता का आशंसाओं से सम्बन्ध है तो ब्याज-दर का भी आशंसाओं के साथ सम्बन्ध हो सकता है। इस मान्यता के विपरीत जाने का अर्थ यह लगाया गया है कि उद्यमी अपनी आशंसाओं से प्रभावित होते हैं, परन्तु ऋणदाताओं पर आशंसाओं का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, अथवा यह माना गया है कि उद्यमी लोग समग्र रूप से कीमतों की वृद्धि की आशा करते हैं किन्तु ऋणदाता कीमतों की वृद्धि की आशा नहीं करते, अथवा यह माना जाता है कि ऋणी के समक्ष ऋणदाता अति मूर्ख होते हैं। कहा जाता है कि केन्स की यह सम्पूर्ण धारणा अस्पष्ट, अक्रमिक एवं तथ्यों के विपरीत है।

जाता है। $r$ उस बट्टा-दर (discount rate) को व्यक्त करता है जो वार्षिक प्राप्तियों के क्रम (the series of annual returns) के वर्तमान मूल्यों को पूँजी-परिसम्पत्ति की पूर्ति-कीमत अथवा पुनःस्थापन लागत के बराबर बना देता है। इस प्रकार $r$ बट्टा-दर अथवा पूँजी की सीमान्त उत्पादकता को प्रकट करता है। स्मरण रहे कि $Q$ का मूल्य प्रति वर्ष समान नहीं रहता। दूसरे शब्दों में, यह आवश्यक नहीं कि पूँजी-परिसम्पत्ति से होने वाली वार्षिक प्राप्तियाँ प्रति वर्ष समान रहें। ऐसा बहुत कम देखने में आता है कि पूँजी-परिसम्पत्ति की वार्षिक प्राप्तियाँ प्रति वर्ष समान रहें। वास्तव में, गतिशील समाज (dynamic society) में पूँजी-परिसम्पत्ति से उपलब्ध होने वाली वार्षिक प्राप्तियाँ वर्ष-प्रति-वर्ष बदलती रहती हैं। निश्चय ही कोई न कोई बट्टा-दर अथवा पूँजी की सीमान्त उत्पादकता का कोई न कोई मूल्य अवश्य ही ऐसा होगा जो समीकरण (equation) के दोनों पक्षों के बीच समानता स्थापित करता है। $\frac{Q_1}{(1+r)^1}$ वार्षिकी (annuity) के वर्तमान मूल्य को व्यक्त करता है अथवा $\frac{Q_1}{(1+r)^1}$ उस प्राप्ति को प्रकट करता है जो प्रथम वर्ष की समाप्ति पर $r$ दर पर बट्टा करके उपलब्ध होती है। मान लीजिए कि बट्टा-दर 10 प्रतिशत है। तब प्रत्येक रुपये का जो एक वर्ष उपरान्त प्राप्त होने वाला है, वर्तमान मूल्य 90.91 पैसे होगा। (यह मूल्य 1 रुपये को 1.10 द्वारा विभाजित करने पर प्राप्त किया गया है)। इस प्रकार यदि 90.91 पैसों का 10 प्रतिशत पर निवेश किया जाय तो एक वर्ष में यह एक रुपये के बराबर हो जायेंगे। इसी प्रकार, $\frac{Q_2}{(1+r)^2}$ उस वार्षिकी अथवा प्राप्ति के वर्तमान मूल्य को प्रकट करता है जो दूसरे वर्ष की समाप्ति पर $r$ दर पर बट्टा करने से उपलब्ध होती है। 10 प्रतिशत दर पर दो वर्ष बाद उपलब्ध होने वाला प्रत्येक रुपया अब 92.65 पैसे के बराबर है। [यह मूल्य 1 रुपये को $(1.10)^2$ अथवा 1.21 से विभाजित करने पर प्राप्त किया गया है।] इसका यह भी अभिप्राय है कि यदि 92.65 पैसों का अब 10 प्रतिशत पर निवेश कर दिया जाय तो वे दो वर्षों की अवधि में 1 रुपये के बराबर हो जायेंगे। इस प्रकार हम विभिन्न वार्षिकियों (annuities) के वर्तमान मूल्य का इस तरह बट्टा काट सकते हैं कि उनकी कुल राशि तथा पूँजी-परिसम्पत्ति की चालू पूर्ति-कीमत के बीच समानता स्थापित की जा सके। हम पूँजी की सीमान्त उत्पादकता का अर्थ (बट्टा-दर के रूप में) एक साधारण गणितीय उदाहरण द्वारा व्यक्त कर सकते हैं। मान लीजिए कि किसी पूँजी-परिसम्पत्ति की पूर्ति-कीमत अथवा पुनःस्थापन लागत 3,000 रुपये है और उसका जीवन-काल 2 वर्ष है। दूसरे शब्दों में, दो वर्ष के बाद यह परिसम्पत्ति बेकार हो जाती है। यह भी मान लीजिए कि प्रथम वर्ष की समाप्ति पर उस परिसम्पत्ति से 1,100 रुपये और दूसरे वर्ष की समाप्ति पर उससे 2,420 रुपये प्राप्त होने की आशा है। स्पष्ट है कि 10 प्रतिशत बट्टा-दर (discount rate) पूँजी-परिसम्पत्ति की भावी प्राप्तियों (future yields) को उसकी चालू पूर्ति-कीमत के बराबर कर देती है। 10 प्रतिशत बट्टा-दर पर यदि 1,100 रुपये के वर्तमान मूल्य का एक वर्ष के लिए बट्टा काटा जाय और 2,240 रुपये के वर्तमान मूल्य का इसी दर पर दो वर्ष के लिए बट्टा काटा जाय और दोनों राशियों को जमा कर लिया जाय तो कुल राशि 3,000 रुपये होगी जो पूँजी-परिसम्पत्ति की पूर्ति-कीमत अथवा पुनःस्थापन लागत के बराबर है। इसे निम्न सूत्र की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है :

$$Cr = \frac{Q_1}{(1+r)^1} + \frac{Q_2}{(1+r)^2}$$

$$3{,}000 \text{ रुपये} = \frac{1{,}100 \text{ रुपये}}{1.10} + \frac{2{,}420 \text{ रुपये}}{(1.10)^2}$$

$$3{,}000 \text{ रुपये} = 1{,}000 \text{ रुपये} + 2{,}000 \text{ रुपये}$$

इस प्रकार पूँजी-परिसम्पत्ति की बट्टा-कृत (discounted) भावी प्राप्तियों अथवा वार्षिकियों (annuities) को उसकी चालू पूर्ति-कीमत अथवा पुनःस्थापन लागत के समतुल्य (equal) बनाया जा सकता है।

यदि उपर्युक्त उदाहरण में हमारे द्वारा मान ली गयी भावी प्राप्तियाँ कम होती हैं तो समीकरण के दोनों पक्षों का समानीकरण करने हेतु 10 प्रतिशत से कम बट्टा-दर की आवश्यकता पड़ती। भावी प्राप्ति की राशि में कमी होने से बट्टा-दर अथवा प्रत्याशित प्राप्ति की दर में कमी हो जाती है। इसी प्रकार, उपर्युक्त उदाहरण में यदि पूँजी-परिसम्पत्ति की पूर्ति-कीमत अथवा पुनःस्थापन लागत अधिक होती तो बट्टा-दर अथवा प्रत्याशित प्राप्ति की दर कम होती। यदि हम यह मान लें कि प्राप्तियों की राशि यथास्थिर रहती है तो पूँजी-परिसम्पत्ति की लागत अथवा पूर्ति-कीमत जितनी अधिक होगी, बट्टा-दर अथवा प्रत्याशित प्राप्ति की दर उतनी ही कम होगी। प्राप्ति की दर में परिवर्तन दो कारणों से हो सकता है—या तो लागत बदल जाती है, या प्राप्ति (yield) की राशि में परिवर्तन हो जाता है।

उपर्युक्त परिभाषा के अनुसार M.E.C. वह दर होती है जिस पर किसी पूँजी-परिसम्पत्ति की भावी प्राप्ति में से बट्टा काटकर उसको (M.E.C. को) पूर्ति-कीमत के समतुल्य बनाया जाता है। इस बट्टा-दर को ज्ञात कर सकना सरल कार्य नहीं है किन्तु पाठक को एक साधारण बात स्मरण रखनी चाहिए कि जब तक पूर्ति-कीमत पूँजी-परिसम्पत्ति की शुद्ध भावी प्राप्ति से अधिक होती है, तब तक उद्यमी निवेश नहीं करता।

वह निवेश उसी दशा में करता है जब वह यह समझता है कि प्रत्याशित शुद्ध भावी प्राप्ति पूर्ति-कीमत से अधिक होगी। यदि उसको लागत अथवा पूर्ति-कीमत से अधिक प्राप्ति होती है तो वह निवेश करने के लिए तैयार हो जायेगा।

**निवेश माँग-वक्र** (Investment Demand Curve)

यह पहले ही कहा जा चुका है कि M.E.C. पूँजी-परिसम्पत्ति से मिल सकने वाली भावी प्राप्ति एवं पूँजी-परिसम्पत्ति की पूर्ति-कीमत की तुलना से निर्धारित होती है और निजी निवेश M.E.C. से बहुत प्रभावित होता है। अब हमें यह

M.E.C. में कोई परिवर्तन उपस्थित होते हैं तो उनका कारण अधिकांश में पूँजी-परिसम्पत्ति से होने वाली भावी प्राप्तियों के परिवर्तन ही होते हैं। इस प्रकार से किसी पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था में M.E.C. की अस्थिरता भावी प्राप्ति की अस्थिरता का प्रत्यक्ष परिणाम होती है। परन्तु निजी निवेश को निर्धारित करने वाला दूसरा तत्व अथवा ब्याज-दर किसी सीमा तक स्थिर होता है। इस प्रकार, निजी निवेश की अस्थिरता (जो पूँजीवाद में आर्थिक अस्थिरता का मूलभूत कारण होती है) मुख्य रूप से भावी प्राप्ति की अस्थिरता के कारण होती है। पूँजी-परिसम्पत्तियों से उपलब्ध भावी प्राप्ति ही पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था में एक सबसे अधिक अस्थिर तत्व होता है। यह भावी प्राप्ति इतनी अस्थिर एवं अनिश्चित क्यों होती है ? इसके अस्थिर होने का कारण यह है कि यह उस भविष्य पर आधारित होती है जो स्वयं ही अनिश्चित, अपरिभाषनीय एवं अगणनीय होता है। (The prospective yield is unstable because it belongs to the realm of the future which itself is uncertain, undefined, undefinable and incalculable.) यही कारण है कि कोई भी चीज जो भविष्य से सम्बन्धित होती है, न तो स्थिर होती है और न निश्चित ही हो सकती है। भविष्य की इतनी अधिक अनिश्चितता के होते हुए भी उद्यमी पूँजी-परिसम्पत्ति से उपलब्ध हो सकने वाली भावी प्राप्ति का अनुमान लगाने का प्रयास अवश्य ही करते हैं। इस प्रकार के अनुमानों को लगाते समय वे सभी सम्भव एवं प्रत्याशित तत्वों को ध्यान में रखते हैं। पूँजी-परिसम्पत्तियों से मिल सकने वाली भावी प्राप्तियों के अनुमान के सम्बन्ध में प्रो. केन्स का कथन है कि व्यवसायी लोग व्यापार-आशंसाओं (business expectations) एवं अनुमानों (anticipations) से प्रभावित होते हैं।

## पूँजी की सीमान्त कुशलता तथा ब्याज-दर

### [M.E.C. AND THE RATE OF INTEREST]

जैसा कि हम देख चुके हैं, एक पूँजीवादी व्यवस्था में निवेश दो तत्वों पर निर्भर करता है : पूँजी की सीमान्त कुशलता (M.E.C.) तथा ब्याज-दर। M.E.C. पूँजी-परिसम्पत्तियों की पूर्ति कीमत और भावी प्राप्ति का परिणाम है। ब्याज-दर का निर्धारण, केन्स के अनुसार, अन्य किसी कीमत के समान ही होता है, अर्थात् मुद्रा की माँग और पूर्ति द्वारा। माँग पक्ष में, ब्याज-दर लोगों के तरलता अधिमान (liquidity preference) के द्वारा निर्धारित होती है तथा पूर्ति पक्ष मुद्रा की उपलब्ध पूर्ति की मात्रा पर निर्भर करता है। निवेशक द्वारा M.E.C. तथा ब्याज-दर दोनों को ही ध्यान में रखकर किसी पूँजीगत परिसम्पत्ति में निवेश का निर्णय किया जाता है। निवेशक तब तक निवेश करता रहेगा जब तक M.E.C. ब्याज-दर से अधिक है और यह क्रम तब तक चलेगा जब तक दोनों बराबर हो जाते हैं।

आगे दी गयी तालिका में M.E.C. तथा ब्याज-दर के सम्बन्ध को दर्शाया गया है :

| पूर्ति कीमत (रु.) | वार्षिक प्राप्ति (रु.) | M.E.C. दर | ब्याज-दर दर | निवेश पर प्रभाव |
|---|---|---|---|---|
| 50,000 | 2,000 | 4% | 4% | तटस्थ |
| 40,000 | 2,000 | 5% | 4% | अनुकूल |
| 50,000 | 2,000 | 4% | 5% | प्रतिकूल |

वार्षिक प्राप्ति को रु. 2,000 वार्षिक पर स्थिर माना गया है। पहली स्थिति में M.E.C. तथा ब्याज-दर दोनों ही 4% पर समान हैं। इसका निवेश पर प्रभाव तटस्थ होगा। निवेशक द्वारा और निवेश करने के लिए कोई उत्साह नहीं होगा, क्योंकि उसे इससे कोई लाभ नहीं है। दूसरी स्थिति में, जहाँ M.E.C. 5% तथा ब्याज-दर 4% है, निवेश पर अनुकूल प्रभाव पड़ेगा क्योंकि निवेश से लाभ होता है। तीसरी स्थिति में, M.E.C. 4% तथा ब्याज-दर 5% होने से निवेश पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि नया निवेश करने पर हानि होगी। इस प्रकार, निजी निवेश M.E.C. तथा ब्याज-दर के द्वारा निर्धारित होता है तथा इनमें से M.E.C. में ब्याज-दर की अपेक्षा अधिक उतार-चढ़ाव होते हैं।

निवेश के आकार का निर्धारण निवेश माँग-वक्र की स्थिति तथा आकृति द्वारा प्रभावित होता है। इस वक्र की लोच यह निर्धारित करती है कि ब्याज-दर में परिवर्तन होने पर निवेश की मात्रा में कितना परिवर्तन होगा। यदि निवेश माँग-वक्र (अथवा M.E.C. वक्र) की सापेक्ष ब्याज-लोच अधिक है तो ब्याज-दर में थोड़ी-सी भी कमी होने पर निवेश की मात्रा में पर्याप्त वृद्धि होगी। इसके विपरीत, निवेश माँग-वक्र (M.E.C. वक्र) की सापेक्ष ब्याज-लोच कम होने पर निवेश में कोई वृद्धि नहीं होगी। रेखाकृति 40.2 (A) में M.E.C. वक्र ब्याज के प्रति लोचपूर्ण (interest-elastic) है। ब्याज-दर 8% से



रेखाकृति 40.2 (A)

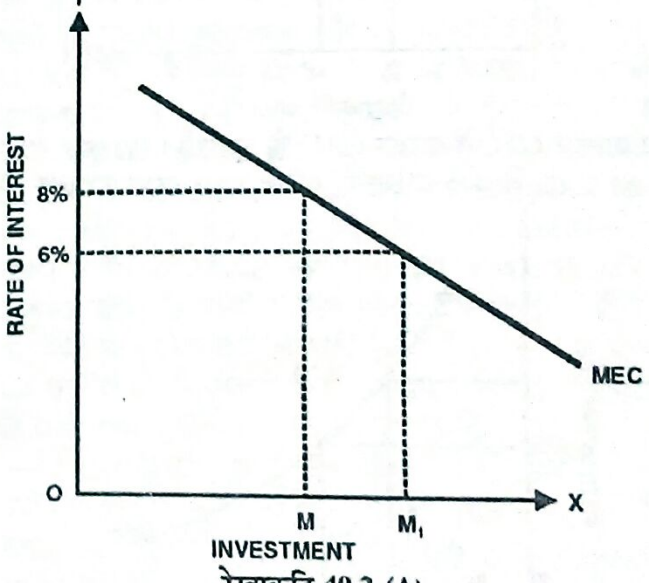

घटकर 6% होने पर निवेश में $OM$ से $OM_1$ के बराबर वृद्धि होती है। रेखाकृति 40.2 (B) में M.E.C. वक्र ब्याज के प्रति कम लोचपूर्ण है। ऐसी स्थिति में ब्याज-दर 8% से 6% घटने पर निवेश में $OMOM_1$ के बराबर कम वृद्धि होती है।

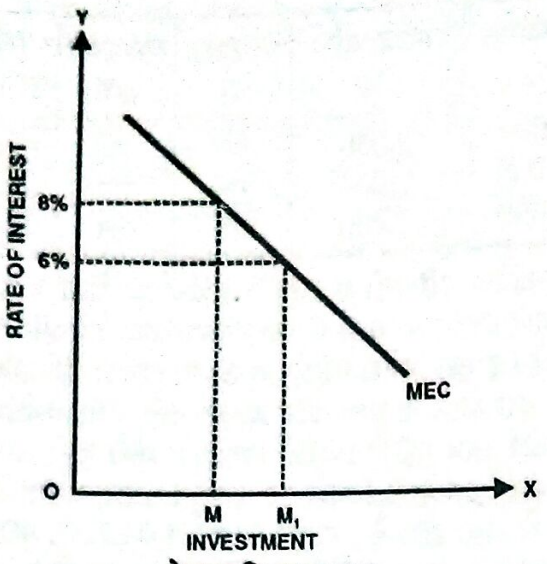


रेखाकृति 40.2 (B)

रेखाकृति 40.3 में ब्याज-दर 6 प्रतिशत पर स्थिर है परन्तु M.E.C. बढ़कर M.E.C.′ हो जाती है। ऐसी स्थिति में निवेश

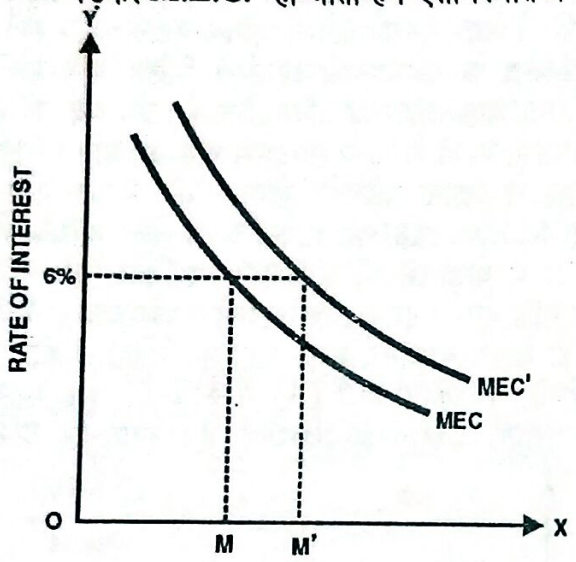


रेखाकृति 40.3

का आकार *OM* से बढ़कर *OM′* हो जाता है। रेखाकृति 40.4 में M.E.C. में कोई परिवर्तन नहीं है, परन्तु ब्याज-दर 6% से

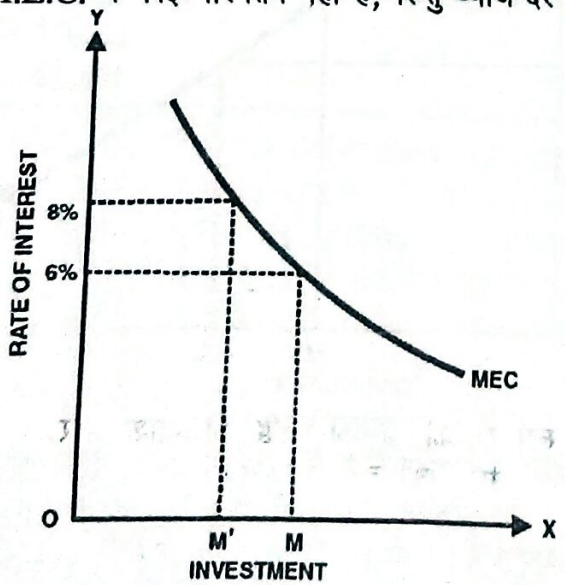


रेखाकृति 40.4

बढ़कर 8 प्रतिशत हो जाती है जिससे निवेश का स्तर *OM* से गिरकर *OM′* हो जाता है।

ब्याज-दर में अल्पकाल में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होते। पूँजीगत परिसम्पत्तियों की पूर्ति कीमत की अल्पकाल में स्थिर रहती है, क्योंकि अल्पकाल में उत्पादन की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होता। अल्पकाल में M.E.C. में परिवर्तन पूँजी-परिसम्पत्तियों से प्राप्ति की सम्भावनाओं (prospecitve yield) से ही प्रभावित होते हैं क्योंकि ये अनिश्चित होती हैं और इनके लिए कोई स्थिर अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। केन्स द्वारा दी गयी अल्पकालीन व्याख्या में भावी प्राप्तियों को काफी महत्वपूर्ण तत्व माना गया है।

यहाँ तक हमने निवेश के दो निर्धारकों अर्थात् M.E.C. एवं ब्याज-दर का सर्वांगीण विवेचन किया है। किन्तु इस व्याख्या को समाप्त करने से पूर्व हम संक्षेप में M.E.C. एवं ब्याज-दर के सम्बन्ध का विवेचन कर देना भी आवश्यक समझते हैं। स्मरण रहे, जहाँ M.E.C. में भारी उतार-चढ़ाव होते रहते हैं, वहाँ ब्याज-दर में प्रायः स्थिरता ही बनी रहती है। किन्तु प्रश्न यह है कि M.E.C. इतनी लचीली क्यों होती है। M.E.C. एक ऐसा तत्व है जो अनेक जटिलताओं से प्रभावित रहता है। आर्थिक एवं राजनीतिक जगत में कहीं भी तनिक-सा परिवर्तन होते ही M.E.C. में परिवर्तन आ जाता है। M.E.C. निवेश की मात्रा से पर्याप्त रूप में प्रभावित होती है। निवेश जितना ही अधिक होता है, M.E.C. उतनी ही कम होती है और निवेश जितना ही कम होता है, M.E.C. उतनी ही अधिक होती है। इसके विपरीत, मुद्रा के कतिपय विशेष गुणों के कारण ब्याज-दर **स्थिर** हुआ करती है। तब फिर, इन दोनों M.E.C. एवं ब्याज-दर का आपसी सम्बन्ध क्या है ? यह स्पष्ट है कि M.E.C. ब्याज-दर पर अधिक प्रत्यक्ष प्रभाव नहीं डाल सकती है, बल्कि इसके विपरीत, ब्याज-दर स्वयं M.E.C. पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है। पाठकों को स्मरण होगा कि पूर्ति-कीमत अथवा पूँजी-परिसम्पत्ति की पुनःस्थापन लागत M.E.C. के दो तत्वों में से एक तत्व होती है। अतः यह स्पष्ट है कि पूर्ति-कीमत अथवा पुनःस्थापन लागत का अनुमान लगाते समय ब्याज-दर को नहीं भुलाया जा सकता है। इसलिए M.E.C. ब्याज-दर से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकती है। इस तथ्य पर केन्स ने अधिक जोर दिया है। उनका कथन है कि "M.E.C. ब्याज-दर को निर्धारित नहीं करती, बल्कि ब्याज-दर M.E.C. को निर्धारित करती है, किन्तु यह सदैव सत्य नहीं होता।"

## पूँजी की सीमान्त कुशलता को प्रभावित करने वाले कारण

### [FACTORS INFLUENCING THE M.E.C.]

M.E.C. को प्रभावित करने वाले कारणों का वर्गीकरण दो भागों में किया जा सकता है—अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन।

**अल्पकालीन कारण**

(i) **प्रत्याशित माँग**—वस्तुओं की प्रत्याशित माँग अधिक होने पर, M.E.C. अधिक होगी तथा निवेश बढ़ेगा। इसके

## निजी निवेश को प्रोत्साहित करने के उपाय [MEASURES TO STIMULATE PRIVATE INVESTMENT]

पिछले उपविभागों में पूँजी की सीमान्त उत्पादकता (M.E.C.) के विश्लेषण से यह स्पष्ट हो चुका है कि अल्पकाल में M.E.C. में भारी उतार-चढ़ाव होते रहते हैं किन्तु दीर्घकाल में उसमें नीचे की ओर गिरने की प्रवृत्ति होती है। अतः यह स्वाभाविक ही है कि ब्याज-दर सहित निजी निवेश (जो M.E.C. एवं ब्याज-दर पर निर्भर करता है) से यह आशा नहीं की जा सकती है कि वह अल्पकाल में स्थिर रह सकेगा। निजी निवेश दीर्घकाल में गिरावट की प्रवृत्ति को प्रदर्शित करता है। यह पहले ही बताया जा चुका है कि रोजगार की मात्रा उपभोग एवं निवेश-व्यय से निर्धारित होती है। उपभोग-व्यय अल्पकाल में किसी सीमा तक स्थिर होता है और संगठित प्रयासों का भी इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। अतः रोजगार को बढ़ाने का मुख्य भार निवेश-व्यय पर ही पड़ता है। निजी निवेश के प्रोत्साहन के लिए भिन्न-भिन्न क्षेत्रों से निम्न सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं :

(1) **कराधान में कमी**—करों का भारी बोझ, विशेषकर व्यावसायिक करों का भार, निजी व्यावसायिक संस्थानों की आय एवं व्यय के अन्तर को संकुचित करते हुए पूँजी की सीमान्त उत्पादकता (M.E.C.) में गिरावट उत्पन्न कर देता है। परिणामतः यह व्यवसाय-प्रसार (business expansion) को हतोत्साहित करता है। इसी आधार पर कुछ अर्थशास्त्रियों ने (जिनमें हैन्सन एवं लर्नर प्रमुख हैं) यह सुझाव दिया है कि मन्दी एवं बेरोजगारी के काल में निजी निवेश को प्रोत्साहित करने के लिए व्यावसायिक करों, विशेषकर निगम-आय कर (corporation income-tax) आदि, में पर्याप्त कमी कर देनी चाहिए। इस नीति से पूँजी की सीमान्त उत्पादकता (M.E.C.) में वृद्धि होगी और निजी निवेश को प्रोत्साहन मिलेगा।

(2) **ब्याज-दर में कमी**—सुझाव यह दिया गया है कि मन्दीकाल में अधिकाधिक निवेश करने हेतु निवेशकर्ताओं को प्रोत्साहन देने के निमित्त मुद्रा-अधिकारियों को जानबूझकर ब्याज-दर में कमी कर देनी चाहिए। सुझाव स्वयं में तो वांछनीय है और प्रो. केन्स ने अपने प्रारम्भिक लेखों में निवेश-क्रिया को प्रोत्साहित करने के लिए ब्याज की निम्न दर का पक्ष भी लिया था, किन्तु अपने **'सामान्य सिद्धान्त'** में उनको इसके प्रति अधिक विश्वास नहीं रहा था। अब वह यह नहीं समझते थे कि ब्याज-दर में निवेश-विस्तार को प्रभावित कर सकने की क्षमता होती है।

(3) **मजदूरी-स्तर में कमी**—कुछ अर्थशास्त्रियों ने यह सुझाव दिया है कि मन्दीकाल में निवेशकर्ताओं में निवेश की मात्रा को बढ़ाने का उत्साह पैदा करने के निमित्त मुद्रा-मजदूरी में कटौती की जानी चाहिए। इस धारणा के पक्ष में यह कहा गया है कि मुद्रा-मजदूरी-कटौती M.E.C. को दो मुख्य रूपों में प्रभावित करती है : (अ) इसका प्रभाव ब्याज-दर पर पड़ता है; और (ब) ब्याज-दर आशंसाओं को प्रभावित करती हुई M.E.C. को प्रभावित करती है। मुद्रा-मजदूरी-कटौती के कारण मालिकों के मजदूरी-बिल में कमी आयेगी और उसके परिणामस्वरूप नकद रुपये की माँग घट जायेगी जो ब्याज-दर को कम कर देगी। जैसा कि ऊपर कहा गया है, निवेश पर ब्याज का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता और ब्याज-दर में की गयी कटौती निवेश को अधिक मात्रा में नहीं बढ़ाती है और जहाँ तक आशंसाओं का प्रश्न है, मुद्रा-मजदूरी-कटौतियाँ निवेश पर उत्साहवर्द्धक प्रभाव डाल सकती हैं बशर्ते कि वे कटौतियाँ पूर्णतः एक ही समय पर की जायें। यदि मजदूरी-कटौतियाँ धीरे-धीरे की जाती हैं तो उनका निवेश पर पड़ने वाला उत्साहवर्द्धक प्रभाव सम्भवतः नष्ट हो जायेगा क्योंकि निवेशकर्ता अगली कटौतियों की प्रतीक्षा में बैठे रहेंगे। अतः मजदूरी-कटौती से निवेश पर पड़ने वाले प्रभाव का अनुमान लगाना सरल नहीं है। इसका कारण यह भी है कि **मजदूरियों का स्वभाव दोहरा** (dual nature of wages) **होता है**। यह पहले ही कहा जा चुका है कि **मजदूरियों की आय एवं लागत को दो दृष्टियों से देखा जाता है,** अर्थात् वे आय भी हैं और लागत भी। मजदूरी-कटौती के प्रभाव की किसी भी विवेचना में आय के प्रभाव को भुलाया नहीं जा सकता है। कारण यह है कि यदि मालिकों के लिए मजदूरियाँ लागत की आवश्यक मद हैं तो समुदाय के लिए मजदूरियाँ आय की उतनी ही आवश्यक मद होती हैं। इसलिए सामान्य मजदूरी-कटौती के समुदाय की कुल माँग में मजदूरी-कटौती के ही अनुपात में गिरावट उत्पन्न होती है और कुल माँग की कमी के कारण उत्पादन एवं रोजगार में कमी आती है। अतः यह बहुत सम्भव है कि उपभोग में कमी आ जाने से सामान्य मजदूरी-कटौती का निवेश पर पड़ने वाला प्रेरक प्रभाव तटस्थ हो जाये। इसी कारण प्रो. केन्स और उनके अनुयायी हैन्सन, क्लेन, हैरिस आदि मजदूरियों में किये जाने वाले किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप का विरोध करते हैं। वे सामान्य मजदूरी-कटौती की अपेक्षा मुद्रा-मजदूरियों को स्थिर रखने के पक्षपाती हैं।

(4) **कीमत-समर्थन-नीति** (Price-Support Policy)—कीमतों की अस्थिरता निजी निवेश की अस्थिरता का महत्वपूर्ण कारण होती है। अतः निजी निवेश की वृद्धि के लिए कीमतों में कुछ अस्थिरता लाना आवश्यक है। कीमतों में स्थिरता बनाये रखने के लिए सरकारी कीमत-समर्थन नीति का सुझाव दिया गया है। इस नीति के अनुसार, सरकार पूर्ति एवं माँग में सन्तुलन बनाये रखने के उद्देश्य से भण्डार कर सकने योग्य वस्तुओं की भारी मात्रा में खरीद एवं बिक्री करती है। सरकार को चाहिए कि वह गिरते हुए भावों के समय वस्तुओं की भारी मात्रा में खरीद करे और कीमतों को और अधिक गिरने से बचाने के लिए उनके भण्डार (reserves) बनाये। बढ़ती हुई कीमतों के समय वह अपने माल को बाजार में बेचने के लिए प्रस्तुत करे ताकि वस्तुओं की कीमतें और अधिक ऊँची न हो सकें। इस प्रकार, सरकार को वस्तुओं की खरीद एवं बिक्री द्वारा कीमतों की स्थिरता के लिए कुछ सीमा तक प्रयास करना चाहिए। इसका परिणाम यह होगा कि निजी-निवेश को प्रोत्साहन मिलेगा।

# 41

# गुणक, त्वरक तथा सुपर-गुणक

## [THE MULTIPLIER, ACCELERATOR AND SUPER-MULTIPLIER]

**केन्स का निवेश-गुणक** (Keynes' Investment Multiplier)

सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति से सम्बन्धित ही गुणक का सिद्धान्त है जो आर्थिक विश्लेषण में केन्स द्वारा प्रतिपादित अपने सिद्धान्तों में एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। यह पहले ही कहा जा चुका है कि केन्स के पूर्वगामी अर्थशास्त्री निवेश-वृद्धि एवं आय-वृद्धि के पारस्परिक सम्बन्ध से परिचित अवश्य थे किन्तु वे किसी कारणवश इस सम्बन्ध को स्पष्ट एवं सुपरिभाषित रूप में व्यक्त न कर सके। सन् 1929 में इस सिद्धान्त का विकास प्रो. केन्स द्वारा किया गया था। आर. एफ. काहन (R. F. Kahn) ने सन् 1931 में इसका और भी अधिक विकास किया था, किन्तु सचाई यह है कि प्रो. काहन का गुणक **निवेश-गुणक** (Investment Multiplier) **न होकर केवल रोजगार-गुणक** (Employment Multiplier) **ही था**। आज तो गुणक केन्जियन रोजगार-सिद्धान्त का एक अभिन्न अंग बन गया है।

गुणक निवेश की प्रारम्भिक वृद्धि और आय की कुल अन्तिम वृद्धि के सम्बन्ध को व्यक्त करता है। इसे यदि और भी अधिक स्पष्ट किया जाये तो **यह निवेश-परिवर्तन के कारण आय में होने वाले परिवर्तन का अनुपात होता है**। (To be more accurate, the multiplier is the ratio of the change in income to the change in investment.) यह इस तथ्य को प्रदर्शित करता है कि निवेश के प्रारम्भिक परिवर्तन का प्रभाव आरम्भ में उपभोग को तथा अन्त में राष्ट्रीय आय को परिवर्तित करके कितने गुना बढ़ जाता है। अर्थ-व्यवस्था में जब कभी निवेश किया जाता है तो परिणाम यह होता है कि कुल आय केवल निवेश की मात्रा के ही बराबर नहीं बढ़ती, बल्कि वह प्रारम्भिक निवेश से कुछ और अधिक बढ़ जाती है। ऐसा क्यों होता है ? कारण यह है कि प्रारम्भिक निवेश केवल उन उद्योगों की ही आय को (जिनमें कि यह किया गया है) न बढ़ाकर कतिपय अन्य उन उद्योगों की आय को भी बढ़ाता है जिनके माल की निवेश-उद्योगों (Investment Industries) में काम करने वाले लोगों द्वारा माँग की जाती है।

गुणक का आकार **सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति** के आकार पर निर्भर रहता है। ये दोनों ही एक-दूसरे से घनिष्ठतापूर्वक सम्बन्धित होते हैं। **सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति जितनी ही अधिक होगी, गुणक का आकार भी उतना ही बड़ा होगा, और इसके विपरीत, सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति जितनी निम्न होगी, गुणक का आकार भी उतना ही अधिक छोटा होगा**। वास्तव में, हम गुणक-आकार को सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति (M.P.C.) के माध्यम से ज्ञात कर सकते हैं। 1 के व्युत्क्रम में से M.P.C. को घटाकर गुणक को ज्ञात किया जाता है। प्रो. केन्स गुणक को सांकेतिक रूप मे $K$ मानते हैं। जब $K$ गुणक है तो निम्न सूत्र द्वारा इसे हम यों ज्ञात करते हैं :

$$K = \frac{1}{1-m} = (\text{यहाँ } m = \text{M.P.C.})$$

यदि हमें सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति (M.P.C.) ज्ञात है तो इस सूत्र द्वारा $K$ (गुणक) को सरलतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है। मान लीजिए M.P.C. $= \frac{1}{2}$, तो

$$K = \frac{1}{1-\frac{1}{2}} = \frac{1}{\frac{1}{2}} = 2.$$

पहले ही संकेत किया जा चुका है कि सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति (marginal propensity to consume) + सीमान्त बचत-प्रवृत्ति (marginal propensity to save) = 1 के होती है। यदि M.P.C. को 1 में से घटा दिया जाये तो हमें M.P.S. प्राप्त हो जायेगी। उक्त सूत्र को हम इस प्रकार भी व्यक्त कर सकते हैं :

$$K = \frac{1}{S} \text{ (यहाँ } S = \text{M.P.S.)}$$

इस प्रकार, यदि हमें सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति अथवा सीमान्त बचत-प्रवृत्ति, दोनों में से एक ज्ञात है तो हम $K$ को निकाल सकते हैं। यदि हमें M.P.S. ज्ञात है तो हम उक्त सूत्र की सहायता से $K$ को सरलतापूर्वक प्राप्त कर सकते हैं और यदि इसका हमको पता नहीं है, तो हम 1 में से M.P.C. को घटाकर M.P.S. को ज्ञात कर सकते हैं। कुछ भी हो, $K$ को ज्ञात करने हेतु M.P.S. का जानना आवश्यक है। मान लीजिए, M.P.S. $\frac{9}{10}$ है, तो 1 में से $\frac{9}{10}$ को घटाने पर $\frac{1}{10}$ बचेगा, यही M.P.S. है। $\frac{1}{10}$ का व्युत्क्रम (reciprocal) 10 होता है; यही 10 गुणक है। संक्षेप में, गुणक M.P.S. का व्युत्क्रम होता है जो सदा ही 1 में से M.P.C. को घटा देने पर प्राप्त होता है। आगे

दी हुई सारणी 1 गुणक के उन मूल्यों को प्रदर्शित करती है जो M.P.C. के कतिपय मूल्यों के अनुरूप हैं।

निम्नांकित सारणी से दो महत्वपूर्ण दशाओं का ज्ञान होता है। M.P.C. शायद ही कभी शून्य होती है। यदि यह शून्य होती है तो गुणक 1 होगा। इसका अर्थ यह है कि उपभोक्ता द्वारा अपनी बढ़ी हुई आय में से कुछ भी व्यय नहीं किया जायेगा। इसी को दूसरे शब्दों में यों भी कहा जा सकता है कि आय की सम्पूर्ण वृद्धि की बचत कर ली गयी है और परिणाम यह हुआ है कि गुणक केवल 1 ही रह गया है। मान लीजिए कि सार्वजनिक निर्माण-कार्यों के लिए 10 करोड़ रुपये का नया निवेश किया गया है और M.P.C. शून्य है। इसका अर्थ यह हुआ कि 10 करोड़ रुपये की समस्त राशि की बचत कर ली गयी है। चूँकि गुणक 1 होता है, इसलिए कुल आय में केवल 10 करोड़ रुपये की ही वृद्धि होगी।

**सारणी 1**

| सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति (M. P. C.) | गुणक (Multiplier) अथवा $K$ |
|---|---|
| 0 | 1 |
| 1/3 | $1\frac{1}{2}$ |
| 3/8 | $1\frac{3}{5}$ |
| 2/5 | $1\frac{2}{3}$ |
| 1/2 | 2 |
| 3/5 | $2\frac{1}{2}$ |
| 5/8 | $2\frac{3}{4}$ |
| 7/10 | $3\frac{1}{3}$ |
| 3/4 | 4 |
| 4/5 | 5 |
| 9/10 | 10 |
| 99/100 | 100 |
| 1 | अनन्त (*infinity*) |

द्वितीय दशा में M.P.C. 1 होती है। इसका अर्थ यह है कि उपभोक्ता अपनी समस्त बढ़ी हुई आय को उपभोग पर व्यय कर देते हैं और कुछ भी बचत नहीं करते क्योंकि M.P.S. शून्य है। ऐसी अवस्था में अर्थ-व्यवस्था की दशा विस्फोटक (explosive) हो जायेगी। मान लीजिए कि सार्वजनिक निर्माण-कार्यों के लिए 10 करोड़ रुपये का निवेश किया गया है। श्रमिक इस 10 करोड़ रुपये की समस्त राशि को उपभोग-वस्तुओं पर व्यय कर देंगे। अन्य श्रमिक भी प्राप्त होने वाली वृद्धिपूर्ण आमदनियों को व्यय कर देंगे। इस प्रकार 10 करोड़ रुपया बार-बार प्रयोग में आता चला जायेगा और आय में अनन्त वृद्धि (infinite increase) उत्पन्न कर देगा। यद्यपि ऐसी दशा सामान्य नहीं होती तथापि सरपट-स्फीति (hyper-inflation) के समय यह सम्भव हो सकती है जबकि आय-प्राप्तकर्ता उसको (आय को) प्राप्त करते ही व्यय कर देते हैं। चूँकि आमदनियों की वृद्धि के बराबर ही उपभोग भी बढ़ जाता है, अतः ऐसी दशा में गुणक अनन्त (infinity) होता है।

किन्तु ये दोनों ही दशाएँ सामान्य नहीं होतीं। अतः गुणक 1 या अनन्त कभी नहीं हो सकता। यह सामान्यतः 1 और अनन्त के मध्य ही रहता है।

अब हमें उस वास्तविक प्रक्रिया को देखना चाहिए जिससे आय का गुणक-प्रसार (multiple expansion) नवीन निवेश के फलस्वरूप उपभोग-वस्तुओं पर व्यय-वृद्धि के कारण उत्पन्न होता है। इस प्रक्रिया को अंकगणितीय उदाहरण (arithmetical example) द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। मान लीजिए, सड़क-निर्माण के निमित्त 10 करोड़ रुपये का निवेश किया गया है और M.P.C. $\frac{1}{2}$ है अथवा गुणक 2 है। इस प्रकार 10 करोड़ रुपये के निवेश से 20 करोड़ रुपये की कुल आय होगी। इसे निम्नलिखित सारणी की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है :

**सारणी 1**

**गुणक का अंकगणितीय उदाहरण**

(करोड़ रुपयों में)

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 1 | × | 10 | = | 10 |
| $\frac{1}{2}$ | × | 10 | = | 5 |
| $(\frac{1}{2})^2$ | × | 10 | = | 2·50 |
| $(\frac{1}{2})^3$ | × | 10 | = | 1·25 |
| $(\frac{1}{2})^4$ | × | 10 | = | 0·62 |
| | | | | 19.37 |

प्रथम चक्र (round) में आय में 5 करोड़ रुपये की वृद्धि होगी क्योंकि आय-प्राप्तकर्ताओं का प्रथम समूह अपनी आय का केवल 50% व्यय करता है। दूसरे चक्र में आय में 2.5 करोड़ रुपये की वृद्धि होगी (जो 5 करोड़ रुपये का 50% है)। इसी प्रकार, तृतीय चक्र में आय में 1.25 करोड़ रुपये की और चतुर्थ चक्र में 0.62 करोड़ रुपये की वृद्धि होगी, और अन्त में कुल आय-वृद्धि 20 करोड़ रुपये तक अथवा मूल निवेश के दो गुने तक पहुँच जायगी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जब हम प्रथम चक्र से द्वितीय चक्र की ओर अग्रसित होते हैं तो मूल निवेश से आय की उत्तरोत्तर वृद्धियाँ निरन्तर कम होती जाती हैं। फिर भी, यह कहा जा सकता है कि आय-प्रसारण की इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में कुछ समय अवश्य ही लगता है। इस उदाहरण में, 20 करोड़ रुपये की कुल आय-वृद्धि एकदम ही नहीं हो जाती है। यदि चारों चक्रों में पाँच-पाँच महीने लगें तो 10 करोड़ रुपये के एक पूँजीगत निवेश को 20 करोड़ रुपये तक की आय-वृद्धि करने में लगभग 20 महीने लगेंगे। फिर भी, प्रो. केन्स आय-प्रसारण (income propagation) की इस प्रक्रिया में समयान्तर (time-lags) को कोई महत्व नहीं देते हैं।

सारांश में, गुणक के आकार तथा सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति में प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। जब सीमान्त उपभोग-प्रवृत्ति ऊँची होती

**...गुणक भी ऊँचा होता है। इसके विपरीत, जब सीमान्त ...प्रवृत्ति निम्न होती है तो गुणक भी निम्न होता है।**

...गुणक की धारणा को रेखाकृति द्वारा भी स्पष्ट किया जा ...है। मान लीजिए कि किसी समुदाय की सीमान्त ...प्रवृत्ति $\frac{2}{3}$ है अथवा सीमान्त बचत-प्रवृत्ति $\frac{1}{3}$ है। स्पष्ट है ...इस दशा में गुणक 3 होगा। यह भी मान लीजिए कि समुदाय ...वर्तमान 30 करोड़ रुपये के निवेश में 10 करोड़ रुपये की ...करने का निश्चय करता है। चूँकि गुणक 3 है, इसलिए 10 ...रुपये के अतिरिक्त निवेश के परिणामस्वरूप समुदाय की ...में 30 करोड़ रुपये की वृद्धि हो जायेगी। इसे निम्नांकित ...आकृति 41.1 द्वारा व्यक्त किया जा सकता है।

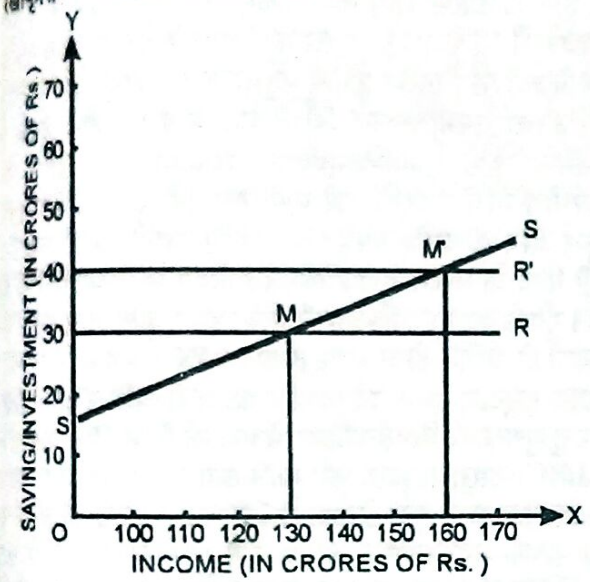


**रेखाकृति 41.1**

इस रेखाकृति में $QR$ 30 करोड़ रुपये के मूल निवेश को ...क्त करता है। $SS$ बचत-वक्र है। 10 करोड़ रुपये के ...तिरिक्त निवेश को $Q'R'$ वक्र द्वारा प्रकट किया गया है। यह ...$R'$ वक्र मूल निवेश-वक्र $QR$ से ऊपर स्थित है। जैसा कि ...आकृति 41.1 में दिखाया गया है, उक्त दोनों वक्रों का अन्तर ...करोड़ रुपये के बराबर है। $M$ बचत एवं निवेश के सन्तुलन ...मूल-बिन्दु है, और इस सन्तुलन-बिन्दु पर समुदाय की आय ...0 करोड़ रुपये है। लेकिन जब 10 करोड़ रुपये का ...तिरिक्त निवेश किया जाता है तो $SS$ वक्र को नया निवेश ...क ($Q'R'$) $M'$ पर काटता है। इस बिन्दु पर समुदाय की ...य 160 करोड़ रुपये है। दूसरे शब्दों में, 10 करोड़ रुपये के ...तिरिक्त निवेश के परिणामस्वरूप समुदाय की आय 130 ...ड़ रुपये से 160 करोड़ रुपये हो जाती है, अर्थात् उसमें 30 ...ड़ रुपये की वृद्धि हो जाती है क्योंकि गुणक 3 है।

आय-प्रसारण की उक्त प्रक्रिया एक शर्त पर निर्भर रहती ...और वह है उपभोग-वस्तुओं की उपलब्धि।

**...णक की मान्यताएँ अथवा सीमाएँ** (Assumptions or Limitations of Multiplier)

...गुणक कुछ मान्यताओं के अन्तर्गत ही पूर्ण रूप से कार्य ...करता है। इनके पूरा न होने पर गुणांक की क्रिया पर प्रतिकूल ...प्रभाव पड़ता है, इसलिए ये मान्यताएँ ही इसकी सीमाएँ हैं :

(1) **उपभोग पदार्थों का उपलब्ध होना**—यदि उपभोग-वस्तुएँ पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होती हैं तो गुणक कार्य करता रहेगा और नवीन आय का प्रसारण होता रहेगा। किन्तु प्रश्न यह है कि उपभोग-वस्तुओं की कमी के समय क्या होगा ? आय प्राप्तकर्त्ता अपनी इच्छा के अनुसार उपभोग-वस्तुओं पर उतना व्यय कर सकने में असमर्थ हो जायेंगे जितना वे करना चाहते हैं। M.P.C. में गिरावट आ जायेगी और उसके फलस्वरूप गुणक भी गिर जायेगा। आय-प्रसारण की प्रक्रिया भी मन्द पड़ जायेगी। किन्तु जैसे ही उपभोग-वस्तुओं की उपलब्धि पुनः होने लगेगी, M.P.C. एवं गुणक पुनः बढ़ जायेंगे तथा आय- प्रसारण की क्रिया में गति उत्पन्न हो जायेगी। इस प्रकार, यह सब कुछ अर्थात् गुणक की क्रियाशीलता उपभोग-वस्तुओं की पर्याप्त पूर्ति पर निर्भर करती है।

(2) **निवेश बनाये रखना**—निवेश में वृद्धि बनी रहनी चाहिए तभी गुणक कार्य करेगा। ऐसा न होने पर आय को गुणक स्तर तक नहीं बढ़ाया जा सकेगा तथा आय अपने पूर्व स्तर पर आ जायेगी।

(3) **निवेश में निबल वृद्धि**—निवेश में निबल वृद्धि से अभिप्राय यह है कि किसी एक क्षेत्र में निवेश बढ़ने पर दूसरे क्षेत्र में कमी न हो। यदि सार्वजनिक क्षेत्र में निवेश बढ़ता है तो निजी क्षेत्र में घटना नहीं चाहिए।

(4) **प्रेरित (induced) उपभोग का निवेश पर प्रभाव नहीं**—गुणक का वास्तविक मूल्य जानने के लिए आवश्यक है कि निवेश पर प्रेरित उपभोग का कोई प्रभाव न हो। प्रेरित उपभोग से त्वरक कार्य करता है और यह गुणक के साथ मिलकर आय में काफी अधिक वृद्धि कर सकता है।

(5) **सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति में कोई परिवर्तन नहीं**—गुणक M.P.C. पर निर्भर करता है। यदि कुछ कारणों से M.P.C. में परिवर्तन हो जाय तो गुणक के मूल्य में भी परिवर्तन हो जायेगा।

(6) **बन्द अर्थ-व्यवस्था का होना**—अर्थ-व्यवस्था का अन्य देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध गुणक के वास्तविक मूल्य में कमी अथवा वृद्धि कर सकता है। देश के निर्यात अधिक होने पर इसकी विदेशों से आय बढ़ेगी तथा गुणाक का मूल्य बढ़ जायेगा। इसके विपरीत, आयात अधिक होने पर प्रतिकूल व्यापार-सन्तुलन की स्थिति में आय में कमी होगी तथा गुणक का मूल्य कम होगा।

(7) **उपभोग पर व्यय के क्रम में समय-अन्तराल न होना**—उपभोक्ता को जैसे ही आय प्राप्त होती है उसे तत्काल व्यय कर देना चाहिए। समय-अन्तराल गुणक के मूल्य को कम करता है।

(8) **पूर्ण रोजगार से कम का रोजगार स्तर होना**—देश में अनैच्छिक बेरोजगारी होने पर गुणक के प्रभाव में आय, उत्पादन तथा रोजगार में वृद्धि होगी। पूर्ण रोजगार का स्तर प्राप्त होने पर आय, उत्पादन तथा रोजगार में और वृद्धि सम्भव नहीं होगी।

(9) **साधनों की लोचपूर्ण पूर्ति**—उत्पादन के विस्तार के लिए पूँजी तथा अन्य साधनों की पूर्ति लोचपूर्ण हो ताकि निवेश बढ़ाया जा सके।

प्रो. स्टिगलर ने गुणक की आलोचना करते हुए कहा है कि यह केन्स के अर्थशास्त्र का विचित्रतम भाग है। (It is the fuzziest part of Keynes' theory.) प्रो. हट्ट ने केन्स की गुणक-धारणा को 'गन्दगी' (rubbish) कहकर सम्बोधित किया है। उन्होंने केन्स पर आरोप लगाया है कि इस धारणा का प्रतिपादन करके केन्स ने अर्थशास्त्र का बड़ा अहित किया है। आगे चलकर प्रो. हट्ट ने सुझाव दिया है कि केन्स की गुणक-धारणा को पाठ्य-पुस्तकों में से निकाल देना चाहिए। इसके स्थान पर जे. बी. से (J. B. Say) के नियम का गतिशील विवेचन सम्मिलित किया जाना चाहिए।

**गुणक का महत्व/उपयोगिता** (Importance/Utility of Multiplier)

इस आलोचना के होते हुए भी गुणक अर्थशास्त्र की एक महत्वपूर्ण धारणा है। अर्थशास्त्र निवेश पर अपना ध्यान केन्द्रित किये हुए है; अर्थशास्त्र में निवेश को किसी देश की अर्थ-व्यवस्था का महत्वपूर्ण चल तत्व (dynamic element) माना जाता है।

गुणक हमें यह बताता है कि किसी देश की अर्थ-व्यवस्था में रोजगार प्रत्यक्षतः निवेश से ही उत्पन्न होता है। इसी प्रकार देश की आर्थिक प्रणाली में आय का सृजन भी ठीक उसी भाँति होता है जिस तरह किसी जलाशय (तालाब) में पत्थर फेंकने से लहरें (ripples) पैदा होती चली जाती हैं।

## त्वरक

## [THE ACCELERATOR]

### अथवा

## त्वरक के सिद्धान्त

## [PRINCIPLES OF ACCELERATOR]

व्युत्पन्न-माँग के त्वरक का सिद्धान्त (The Principle of Acceleration of Derived Demand), जिसे संक्षेप में त्वरक कहते हैं, आर्थिक विश्लेषण की एक अन्य महत्वपूर्ण धारणा है। यह गुणक से पुराना है और सामान्यतः इसका उल्लेख एक अमरीकी अर्थशास्त्री **जे. एम. क्लार्क** (J. M. Clark) के नाम के साथ होता है। सर्वप्रथम, इस सिद्धान्त का प्रतिपादन अपरिष्कृत रूप में **अलबर्ट अफ्तालियन** (Albert Aftalion) नाम के एक फ्रांसीसी अर्थशास्त्री ने इस शताब्दी के प्रारम्भ में किया था। स्मरण रहे कि यह धारणा केन्जियन अर्थशास्त्र से सम्बन्धित नहीं है। वास्तव में **'सामान्य सिद्धान्त'** की रचना के समय केन्स ने इसकी पूर्ण उपेक्षा की थी। फिर भी, गुणक और त्वरक की धारणाएँ समान्तर (parallel) हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि **गुणक उपभोग पर (और अन्त में आय एवं रोजगार पर) निवेश के प्रभाव को व्यक्त करता है और त्वरक निवेश पर होने वाले उपभोग के परिवर्तनों के प्रभाव को प्रदर्शित करता है। गुणक यह प्रदर्शित करता है कि उपभोग निवेश पर आधारित है; किन्तु इसके विपरीत, त्वरक यह व्यक्त करता है कि निवेश उपभोग पर निर्भर करता है।** त्वरक यह व्यक्त करता है कि उपभोग के परिवर्तन निवेश की मात्रा को किस प्रकार प्रभावित करते हैं। इसे और भी अधिक स्पष्ट करने के लिए कहा जा सकता है कि **त्वरक निवेश की मात्रा पर होने वाली उपभोग की दर में वृद्धि अथवा कमी के प्रभावों की माप करता है। यह इसे भी प्रकट करता है कि उपभोग के शुद्ध परिवर्तन और निवेश के शुद्ध परिवर्तन में क्या अनुपात है।** [To be more accurate, the Accelerator measures the effect of an increment (or decrement) in the rate of consumption on the volume of investment. It expresses the ratio of the net change in consumption to the net change in investment.] यह स्पष्ट है कि कतिपय वस्तुओं के उपभोग में होने वाले परिवर्तन उन मशीनों के उत्पादन पर भी प्रभाव डालते हैं जिनका प्रयोग उन वस्तुओं के निर्माण में होता है। दूसरे शब्दों में, मशीन-निर्माण (अथवा निवेश) उद्योग अन्तिम विश्लेषण में उपभोग-वस्तु-उद्योगों पर निर्भर होते हैं, अथवा उपभोग-वस्तु-उद्योग निवेश-वस्तु-उद्योगों का आधार होते हैं। त्वरक केवल निवेश-वस्तु-उद्योगों में होने वाले उन परिवर्तनों का मापन करता है जो उपभोग-वस्तु-उद्योगों के परिवर्तनों के कारण होते हैं। मान लीजिए कि उपभोग-वस्तु-उद्योगों पर किये गये 5 करोड़ रुपये के व्यय के परिणामस्वरूप निवेश-वस्तु-उद्योगों में 10 करोड़ रुपये का निवेश होता है, तो हम यह कह सकते हैं कि त्वरक 2 है। यह 1 या 1 से कम भी हो सकता है, यहाँ तक कि यह शून्य भी हो सकता है। यदि उपभोग-वस्तुओं के उत्पादन के परिणामस्वरूप, निवेश-वस्तु- उद्योगों में कुछ भी निवेश नहीं होता है तो त्वरक शून्य होता है। किन्तु सामान्यतः उपभोग-वस्तु-उत्पादन में कुछ न कुछ पूँजीगत साज-सज्जा की आवश्यकता पड़ती ही है। अतः त्वरक सामान्यतः इकाई से अधिक ही होता है।

व्यावहारिक रूप में, त्वरक की क्रियाशीलता को निम्न काल्पनिक उदाहरण द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। मान लीजिए कि उपभोग की 1,000 वस्तुओं के उत्पादन के लिए 100 मशीनों की आवश्यकता है; और यह भी मान लीजिए कि एक मशीन 10 वर्ष तक काम दे सकती है, और 10 वर्ष के बाद मशीन का पुनःस्थापन करना पड़ता है। इसका अर्थ यह है कि उपभोग की 1,000 वस्तुओं का निरन्तर उत्पादन करते रहने के लिए प्रति वर्ष 10 मशीनों की आवश्यकता पड़ती रहेगी। मान लीजिए कि उपभोग-वस्तुओं की माँग स्थिर बनी रहती है, तो मशीनों की वार्षिक माँग 10 रहेगी। इस माँग को 'पुनःस्थापन माँग' (replacement demand) कह सकते हैं। जब तक उपभोग-वस्तुओं की माँग में कोई परिवर्तन नहीं होता तब तक मशीनों की वार्षिक माँग 10 ही बनी रहेगी। उपभोग-वस्तु-माँग में परिवर्तन के परिणामस्वरूप जटिलताएँ उत्पन्न हो जायेंगी। अब मान लीजिए कि उपभोग-वस्तुओं की माँग 10% बढ़ जाती है तो यह स्वाभाविक ही है कि उपभोग-वस्तुओं की माँग को पूरा करने के लिए अधिक मशीनों की आवश्यकता होगी। हमें उपभोग-वस्तुओं के उत्पादन की वृद्धि के लिए 10% अथवा 10

अधिक मशीनों की आवश्यकता पड़ेगी। अब मशीनों की वार्षिक माँग पहले की भाँति केवल 10 न होकर 20 होगी (10 प्रतिस्थापन और 10 बढ़ी हुई माँग की पूर्ति के लिए)। इस प्रकार मशीनों की माँग 10 की अपेक्षा 20 हो जायेगी जो 100 प्रतिशत की वृद्धि को प्रदर्शित करती है। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि उपभोग-वस्तुओं की माँग में केवल 10% की वृद्धि हो जाने से मशीनों की माँग में 100 प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है। परिणाम यह होता है कि मशीन-निर्माण-उद्योग में रोजगार की मात्रा दो गुनी हो जाती है। तब उपभोग-वस्तु-उद्योगों की अपेक्षा मशीन-निर्माण-उद्योग में रोजगार की मात्रा में अधिक उतार-चढ़ाव होंगे। हमें यहाँ त्वरक के वास्तविक महत्व का पता चल जाता है। यह स्पष्ट करता है कि उपभोग-वस्तु-उद्योगों के परिवर्तनों की अपेक्षा निवेश-वस्तु-उद्योगों (मशीनों) में अधिक परिवर्तन होते हैं। इस विशेष उदाहरण में त्वरक 10 है।

**त्वरक की सीमाएँ** (Limitations of Accelerator)

किन्तु हमें कुछ ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं जहाँ त्वरक काम नहीं करता है और उपभोग-वस्तु-उद्योगों के उत्पादन में परिवर्तनों के परिणामस्वरूप निवेश-वस्तु-उद्योग पर त्वरक का प्रभाव या तो पड़ता ही नहीं और यदि पड़ता है तो वह न के बराबर होता है। ऐसी दशाएँ निम्नलिखित हो सकती हैं :

**प्रथम**, यदि स्टॉक में पहले से ही मशीनों की संख्या अधिक है या कुछ मशीनों के लिए पर्याप्त काम ही नहीं है तो उपभोग-वस्तु-उद्योगों की उत्पादन-वृद्धि के परिणामस्वरूप मशीन-निर्माण-उद्योग में कोई नया निवेश नहीं किया जायेगा। उदाहरणार्थ, वस्त्र-उद्योग में, कारखानों की क्षमता का पूर्ण प्रयोग करके अथवा वर्तमान चालू मशीनों से और भी अधिक घण्टों तक काम लेकर वस्त्र-उत्पादन की वृद्धि की जा सकती है। वास्तव में, द्वितीय युद्ध-काल में भारत में ऐसा ही किया गया था।

**द्वितीय**, त्वरक की क्रिया इस मान्यता पर आधारित है कि निवेश पदार्थों के उद्योगों में अतिरिक्त क्षमता मौजूद है। ऐसा न होने पर, मशीनों के लिए व्युत्पन्न माँग बढ़ने पर मशीनों की पूर्ति नहीं बढ़ पायेगी तथा त्वरक का कार्य सीमित हो जायेगा।

**तृतीय**, यदि उपभोग-वस्तुओं के उत्पादकगण यह अनुभव करते हैं कि उनके माल की माँग-वृद्धि विशुद्धतः अस्थायी है तो वे पूँजीगत साज-सज्जा अथवा मशीनों में कोई वृद्धि नहीं करेंगे। वे ऐसी दशा में वर्तमान साज-सज्जा के माध्यम से ही कार्य के घण्टों में वृद्धि करके माल की पूर्ति में वृद्धि करने का प्रयास करेंगे। ऐसे अवसरों पर त्वरक कार्यशील नहीं हो पाता है।

**चतुर्थ**, ऐसे भी अनेक उदाहरण हो सकते हैं जबकि निवेशकर्ता उपभोग-दर के परिवर्तनों से प्रभावित नहीं होते हैं। ऐसी दशा विशेषकर राज्य-व्यवसायों (state enterprises) पर लागू होती है जहाँ उपभोग-दर के सम्भावित परिवर्तनों से बहुत पहले ही दीर्घकालीन निवेश किये जाते हैं। ऐसे उदाहरणों में निवेशकर्ता उपभोग-परिवर्तनों की प्रतीक्षा नहीं करते हैं।

**पाँचवें**, त्वरक की कार्यशीलता उस समय अवरुद्ध हो (लिंक) जाती है जबकि बाजार में निवेश-उद्योगों (मशीन-निर्माण) के लिए वास्तविक एवं मौद्रिक संसाधन (real and monetary resources) सरलता से प्राप्त नहीं हो पाते। मान लीजिए कि निवेश-वस्तुओं (अर्थात् मशीनों आदि) की माँग में वृद्धि होती है किन्तु समस्त श्रम-शक्ति-संसाधन पहले से ही **पूर्णतः** काम पर लगे हुए हैं, तो ऐसी दशा में मशीन-निर्माण-उद्योगों का विस्तार तब नहीं किया जा सकेगा और त्वरक क्रियाशील नहीं होगा यद्यपि उपभोग्य वस्तुओं की माँग-वृद्धि के कारण मशीनों की माँग में वृद्धि हो चुकी होती है। इसी प्रकार निवेश-उद्योगों का विस्तार तक नहीं किया जा सकता है (यद्यपि उपभोग्य वस्तुओं की माँग-वृद्धि के कारण निवेश-उद्योगों की वस्तुओं की माँग में वृद्धि होती है) जब तक उचित ब्याज-दर पर पर्याप्त मौद्रिक संसाधन (अर्थात् ऋण) उपलब्ध न हों। इस प्रकार, वास्तविक एवं मौद्रिक संसाधनों की उपलब्धि त्वरक-क्रिया को सीमित कर देती है।

**छठे**, त्वरक का सिद्धान्त इस मान्यता पर आधारित है कि उपभोग पदार्थों तथा पूँजीगत पदार्थों के उत्पादन के बीच स्थिर अनुपात है। अन्य शब्दों में, पूँजी-उत्पादन अनुपात (capital-output ratio) स्थिर माना गया है। परन्तु व्यावहारिक जीवन में ऐसा कम ही होता है। उत्पत्ति के तरीकों में सुधार वर्तमान मशीनों का अधिक तीव्रता से प्रयोग, उद्यमकर्ताओं के भविष्य में ब्याज तथा मजदूरी दरों आदि में परिवर्तन के अनुमान आदि कुछ ऐसे कारण हैं जिनसे पूँजी-उत्पादन अनुपात प्रभावित होता है।

यद्यपि उपर्युक्त अपवाद एवं परिसीमाएँ महत्वपूर्ण हैं, फिर भी त्वरक का सिद्धान्त क्रियाशील होता है। इसी के कारण उपभोग-वस्तु-उद्योगों में होने वाले परिवर्तनों के परिणामस्वरूप निवेश-वस्तु-उद्योगों में अधिक परिवर्तन होते हैं। स्मरण रहे कि त्वरक का मूल्य अन्त में मशीनों के टिकाऊपन पर निर्भर करता है। **मशीनों का जीवन जितना ही अधिक होता है, त्वरक उतना ही कम होता है; और इसके विपरीत, मशीनों का जीवन जितना छोटा होता है, त्वरक उतना ही अधिक होता है; और त्वरक जितना ही अधिक होता है, प्रेरित-निवेश उतना ही अधिक होता है।** (The longer the life of machines, the smaller shall be the Accelerator; the shorter the life of machines, the greater shall be the Accelerator. And higher the Accelerator, the greater shall be the induced investment.)

त्वरक की धारणा के फलस्वरूप हमें आय-उत्पत्ति-प्रक्रिया (process of income-generation) को अधिक स्पष्ट एवं वैज्ञानिक ढंग से समझने में सहायता मिलती है। गुणक की धारणा प्रारम्भिक व्यय के फलस्वरूप आय की समस्त वृद्धि की व्याख्या कर सकने में असमर्थ रहती है। गुणक राष्ट्रीय आय-वृद्धि के केवल **एक भाग** की ही व्याख्या करता है, और त्वरक **दूसरे भाग** की विवेचना करता है। **समस्त** राष्ट्रीय आय-वृद्धि की व्याख्या करने के लिए गुणक एवं त्वरक का विलीनीकरण (integration) आवश्यक है। त्वरक यह भी व्यक्त करता है कि व्यापार-चक्र के दौरान निवेश-वस्तु-उद्योगों में उपभोग-वस्तु-उद्योगों की अपेक्षा अधिक उग्र उतार-चढ़ाव (violent fluctuations) क्यों होते हैं।

## सुपर-गुणक
## [SUPER-MULTIPLIER]
### अथवा
## गुणक एवं त्वरक की परस्पर-क्रिया
## [MULTIPLIER-ACCELERATOR INTER-ACTION]

गुणक तथा त्वरक में अन्तर समझने के लिए यह जान लेना आवश्यक है कि गुणक निवेश में परिवर्तन का आय पर प्रभाव दर्शाता है तथा त्वरक उपभोग में परिवर्तन का निवेश पर प्रभाव दर्शाता है। गुणक के लिए, उपभोग निवेश पर निर्भर करता है, जबकि त्वरक के लिए निवेश उपभोग पर निर्भर करता है। द्वितीय, गुणक सीमान्त उपभोग प्रवृत्ति (M.P.C.) पर निर्भर करता है। जबकि त्वरक मशीनों की जीवन-अवधि (durability) पर निर्भर करता है। इस प्रकार, गुणक मनोवैज्ञानिक कारणों पर तथा त्वरक प्राविधिक (technological) कारणों पर निर्भर करता है।

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, **प्रो. हैन्सन** ने अब **केन्स-कृत गुणक को अफ्तालियन-कृत त्वरक** के साथ सम्बन्धित कर दिया है और निवेश एवं उपभोग के परस्पर-सम्बन्ध (inter-action) को इस भाँति व्यक्त किया है : प्रारम्भिक निवेश अथवा **स्वतन्त्र निवेश** (autonomous investment) की वृद्धि कुल रोजगार एवं आय पर कई गुना बड़ा प्रभाव (magnified effect) डालती है और उसके परिणामस्वरूप व्यक्तिगत उपभोग-वस्तुओं की माँग को भी कई गुना बढ़ा देती है (यह तो हुआ गुणक का प्रभाव), और उपभोग्य वस्तुओं की माँग के कारण निवेश में वृद्धि इसलिए होती है क्योंकि उपभोग्य वस्तुओं की माँग को सन्तुष्ट करने के लिए उत्पादन के नवीन साधनों की आवश्यकता पड़ती है (यह है त्वरक का प्रभाव)। ये व्युत्पन्न निवेश (derivative investments) पुनः **गुणक** में गतिशीलता उत्पन्न करते हैं और रोजगार एवं आय-वृद्धि को कई गुना बढ़ा देते हैं जिससे निवेश और भी अधिक प्रेरित होता है। प्रो. हैन्सन **गुणक एवं त्वरक** की सम्मिलित क्रिया को लीवरेज प्रभाव (leverage effect) कहकर पुकारते हैं। अब प्रश्न यह है कि प्रो. हैन्सन गुणक को त्वरक के साथ सम्बन्धित क्यों करते हैं। रूसी अर्थशास्त्री **आर. खफिजोव** (R. Khafizov) के अनुसार गुणक की धारणा निवेश एवं उपभोग की परस्पर-निर्भरता के केवल एक पहलू की ही व्याख्या करती है। गुणक इस पारस्परिक सम्बन्ध को इस प्रकार प्रदर्शित करता है कि निवेश के कारण ही उपभोग में वृद्धि होती है। गुणक पूर्ण रूप से इस तथ्य की उपेक्षा करता है कि अन्तिम विश्लेषण में निवेश स्वयं भी व्यक्तिगत उपभोग पर निर्भर रहता है। **गुणक** की इस एकपक्षीयता (one-sidedness) पर ध्यान देते हुए और निवेश एवं उपभोग की पारस्परिक निर्भरता की व्याख्या हेतु प्रो. हैन्सन त्वरक सिद्धान्त को प्रस्तुत करते हैं—त्वरक सिद्धान्त, जिसकी व्याख्या पहले ही की जा चुकी है, एक ऐसा सूचकांक है जो उपभोग-वस्तुओं की माँग-वृद्धि और निवेश-वस्तुओं की माँग-वृद्धि के परिमाणात्मक सम्बन्ध को व्यक्त करता है। (Acceleration principle is an index which establishes an exact quantitative correlation between a rise in the demand for consumer goods and a rise in the demand for investment goods.) केन्स के अन्य अनुयायियों, जैसे हैरड, सेम्युएल्सन, हिक्स एवं कुरीहारा ने भी इन दो समान्तर धारणाओं को जोड़ने के प्रयास किये हैं।

प्रारम्भिक व्यय के राष्ट्रीय आय पर होने वाले कुल प्रभाव का मापन करने के लिए अब यह प्रथा चल निकली है कि गुणक एवं त्वरक के सिद्धान्तों को सम्बन्धित कर लिया जाता है। एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है कि गुणक एवं त्वरक का प्रयोग (जिसे super-multiplier कहते हैं) किस प्रकार से राष्ट्रीय आय में त्वरित वृद्धि (accelerated increase) उत्पन्न करता है। इसको निम्न सारणी द्वारा स्पष्ट किया जाता है :

**आय पर गुणक एवं त्वरक के प्रभावों का स्पष्टीकरण**

(करोड़ रुपये में)

| गुणक-अवधि | प्रारम्भिक निवेश | प्रेरित उपभोग | प्रेरित निवेश | राष्ट्रीय आय की कुल वृद्धि |
|---|---|---|---|---|
| 1 | 20 | 0 | 0 | 20 |
| 2 | 20 | 10 | 20 | 50 |
| 3 | 20 | 25 | 30 | 75 |
| 4 | 20 | 37.50 | 25 | 82.50 |
| 5 | 20 | 41.25 | 7.50 | 68.75 |

उपर्युक्त सारणी की रचना निम्नलिखित दो कल्पनाओं के आधार पर की गयी है :

(1) उपभोग की सीमान्त प्रवृत्ति (M.P.C.) = 0.5

(2) त्वरक = 2

यह सारणी स्पष्ट रूप में गुणक एवं त्वरक दोनों की सहायता से आय-वृद्धि की प्रक्रिया की व्याख्या करती है। सारणी के अनुसार प्रथम अवधि में 20 करोड़ रुपये का प्रारम्भिक निवेश होता है। चूँकि प्रथम अवधि में न तो गुणक और न त्वरक ही कार्यशील हो पाते हैं, अतः न तो कोई प्रेरित उपभोग और न ही कोई प्रेरित निवेश होता है। कुल आय 20 करोड़ रुपये ही रहती है जो प्रारम्भिक निवेश के ही बराबर है। द्वितीय अवधि में प्रेरित उपभोग 10 करोड़ रुपये है क्योंकि उपर्युक्त संकेतानुसार M.P.C. = 0.5 है। दूसरे शब्दों में, कुल प्राप्त आय का आधा भाग लोगों द्वारा उपभोग्य वस्तुओं पर व्यय कर दिया गया है। इस अवधि में प्रेरित निवेश 20 करोड़ रुपये है, क्योंकि जैसा कि ऊपर संकेत किया जा चुका है, त्वरक 2 है। द्वितीय अवधि में, कुल आय अब 50 करोड़ रुपये तक बढ़ जाती है। तृतीय अवधि में भी गुणक एवं त्वरक, दोनों ही कार्यशील रहते हैं। इस अवधि में प्रेरित उपभोग 25 करोड़ रुपये है, अर्थात् पिछली अवधि की आय का आधा है (क्योंकि M.P.C. 0.5 है)। इसी तृतीय अवधि में प्रेरित निवेश 30 करोड़ रुपये है, अर्थात् द्वितीय एवं तृतीय अवधि के प्रेरित उपभोगों के अन्तर का दूना है। कहने का तात्पर्य यह है कि 30 करोड़ रुपये प्रेरित निवेश हुआ। (स्मरण रहे कि त्वरक 2 के बराबर माना